Shodhaamrit, Vol.-1; Issue-2 (July-December) 2024 : Page No.-80-87

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

Online ISSN-3048-9296
Vol.-1; issue-2 (July-Dec.) 2024
Page No- 80-87

©2024 Shodhaamrit (Online)
www.shodhaamrit.gyanvividha.com

डॉ. अजित सिंह तोमर
सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, गुरुकुल काँगड़ी
(समविश्वविद्यालय), हरिद्वार

प्रभाष जोशी का पत्रकारीय लेखन: एक अंतर्दृष्टि

हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रभाष जोशी का नाम अत्यंत समादृत है। प्रभाष जोशी एक युगचेता सम्पादक थे। प्रभाष जोशी को हिन्दी पत्रकारिता का पितृ-पुरुष भी कहा जाता है। हिन्दी भाषा में लोक की उपस्थिति को एक जिम्मेदारी के साथ रेखांकित करने का कार्य प्रभाष जोशी के सम्पादकत्व काल में सम्पन्न हुआ है. वे भाषा को लेकर आग्रही एवं रूढ़ बिलकुल नहीं थे। प्रभाष जोशी मालवा की धरती से आए थे उनकी लेखनी में मिट्टी की सौंधी खुशबु उपस्थित थे। एक पत्रकार और सम्पादक के रूप में प्रभाष जोशी ने हिन्दी पत्रकारिता के लिए नए मानकों का निर्माण किया।

प्रभाष जोशी के पास लोक जीवन को लेकर एक मौलिक दृष्टि थे. वे भाषा और संस्कृति को साथ देखते थे. उन्होंने भाषा के नवाचार के मूल्य को समझा और जनसत्ता समाचार पत्र के माध्यम से लोकजीवन और बोली से जुड़े शब्दों को पत्रकारीय लेखन का अंग बनाया। प्रभाष जोशी पहले ऐसे सम्पादक थे जिन्होंने हिन्दी समाचार पत्र की भाषा को संस्कृतनिष्ठ आग्रहों से मुक्त कर लोक की भाषा से जोड़ा. प्रभाष जोशी की मान्यता थी कि लोकजीवन के बिना भाषा मृत होती है। उन्होंने आम बोलचाल की भाषा को पत्रकारीय लेखन का अनिवार्य अंग बनाया और लोकजीवन की रीतियों, परम्पराओं और मूल्यों को गहरी संप्रेषणशीलता प्रदान की।

प्रभाष जोशी मूलत: सर्वोदय और गांधीवादी विचारधारा के व्यक्ति थे। विनोबा भावे के आन्दोलन को उन्होंने विनोबा के साथ घूमकर कवर किया था। वे भारत जनमानस को निकटता से जानते और समझते थे क्योंकि वे जमीनी धरातल पर कार्य कर चुके थे। प्रभाष जोशी की लोकसंस्कृति को लेकर समझ बहुत परिपक्व और गहरे स्तर की थी।

Corresponding Author :
डॉ. अजित सिंह तोमर
सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, गुरुकुल काँगड़ी
(समविश्वविद्यालय), हरिद्वार

वे लोक जीवन के सजग द्दष्टा थे और लोकजीवन के दस्तावेजीकरण के लिए उन्होंने सम्पादक के रूप में अनके अवसर उपलब्ध कराएं।

'हिन्दू होने का धर्म' पुस्तक में उनकी हिन्दू धर्म को लेकर उनकी नूतन सहोदर द्दष्टि का विवरण प्राप्त होता है. वे धर्म को लोक का अनिवार्य अंग मानते थे मगर धर्म को लेकर उनकी समझ बहुत से अर्थों में अत्यंत ही व्यापक थी। वे धर्म को मनुष्यता के परिष्कार का साधन मानते थे। धर्म और लोक के समन्वय को वे मानवता के परिष्कार का साधन समझते थे।

हिन्दी पत्रकारिता जगत में प्रभाष जोशी साहित्यिक और सांस्कृतिक पत्रकारिता को अखबार में समुचित स्थान दिलाने वाले प्रथम पंक्ति के पत्रकार/ संपादक थे। साहित्य और संस्कृति को लेकर उनकी एक मौलिक एवं विलक्षण सोच थी। किसी भी समाज के विकास का उस समाज में हो रही पत्रकारिता एवं साहित्य सृजन एक दर्पण की तरह होता है। प्राय: ऐसा कहा जाता है कि 'साहित्य समाज का दर्पण है' अगर साहित्य समाज का दर्पण है तो पत्रकारिता उस दर्पण को देखने वाला व्यक्ति। संस्कृति एक प्रकार की नदी होती है जो किसी भी समाज में अपने अच्छे बुरे बदलावों के साथ परंपराओं के आधार पर चलती रहती है। जब संस्कृति को बांध कर रखने वाले परंपरा रूपी किनारे कटने-फटने लगते हैं तो संस्कृति जैसे प्रवाहशील नदी या तो सूखने लगती है या उसमें बाढ़ आ जाती है। दोनों की स्थितियाँ समाज के लिए घातक होती है एक सशक्त और विकसित समाज का प्रहरी होने के नाते पत्रकार कि यह जिम्मेदारी बन जाती है कि वह लगातार इस अपनी द्दष्टि बनाकर रखें।

ना तो साहित्य रूपी दर्पण समाज की वो छवि दिखाए जो अवास्तविक है और ना संस्कृति रूपी नदी सूखे या अपने तटबंध तोड़कर बागी बन जाए। यह संतुलन जरूरी है। संस्कृति और साहित्य के प्रहरी के रूप में एक पत्रकार एक योद्धा के रूप में होता है जिसे निरपेक्ष भाव से सीमा पर खड़े सैनिक की तरह लगातार द्दष्टि रखनी होती है। विवादों से और किसी भी प्रकार के वाद का ठप्पा खुद पर लगने से बचाने एक महारथ हासिल करनी होती है और सबसे मुश्किल बात यह कि उसे कुछ हद तक साहित्यकार और कुछ हद तक संस्कृतिकर्मी भी बनना पड़ता है।

प्रभाष जोशी इस कला में भी कुशल निपुणता रखते थे। इसे एक बड़े छोटे से उदाहरण से समझा जा सकता है कि किसी मुख्य धारा के पत्रकार/संपादक जो अपने राजनीतिक टिप्पणियों, विश्लेषणों के लिए और साफगोई के लिए जाना जाता हो वह कुमार गंधर्व जैसी विशुद्ध शास्त्रीय संगीत प्रतिभा पर एक प्रशंसक की भांति या एक समीक्षक की भांति नहीं बल्कि एक विशेषज्ञ के तौर पर टिप्पणी करने का कौशल रखता हो। प्रभाष जोशी को लोक जागरण की पत्रकारिता के लिए तो जाना ही जाता है पर उन्हें हिन्दी पत्रकारिता में साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रकारिता के अग्रदूत के रूप में जाना जाता है।

दरअसल, प्रभाष जोशी किसी भी विषय को सामाजिक व्यवस्था से सरलतम शब्दों के माध्यम से जोड़ने की कला में निपुण थे। भारतीय सांस्कृतिक परिवेश में फैली राजनीति अथवा संस्कृति के राजनीतिक प्रयोग पर एक प्रहरी की तरह उनकी पकड़ उनके इस लेखांश से स्पष्ट होती है- "भजनलाल ने जो कलाकारी हरियाणा में हासिल की संस्कृति के हरियाणा में वही हुनर अशोक वाजपेयी ने दिखाया है। यह संयोग नहीं है कि सन 1980 में पूरी सरकार के साथ दल बदल कर आने वाले भजन लाल को ही इंदिरा गांधी ने 1982 में मुख्यमंत्री बनवाया और उन्हीं इंदिरा गांधी ने भारत भवन का उदघाटन करते हुए भोपाल को देश की सांस्कृतिक राजधानी कहा। वे अपनी राजनीति और संस्कृति और अपने भजनलाल को अच्छी तरह जानकर उन्हें सही जगह देना चाहती थी। राजदरबारों में रत्न बनकर रहने वाले कवि कलाकार अगर इस देश में हुए हैं तो उन ऋषियों और संतों की भी उतनी ही बल्कि ज्यादा लंबी और सशक्त परंपरा है जो जंगल में आश्रय बनाने या बाजार में लुकाटी लिए खड़े रहे। "[1]

उपरोक्त लेखांश में प्रभाष जोशी संस्कृति की राजनीति की खबर लेते दिखायी देते हैं। प्रभाष जोशी

संस्कृति के संरक्षण के लिए सचेतक की भूमिका का निर्वहन करते हैं वे संस्कृति के उत्थान के लिए राजनीतिक हस्तक्षेप को अनुचित मानते थे तथा उनके लिए यह एक शुचिता भरा उपक्रम था।

संस्कृति और संस्कृतिकर्मियों पर प्रभाष जोशी एक सूक्ष्म दृष्टि थी। उनके लिए संस्कृति और सांस्कृतिक गतिविधियों से मनुष्य का जुड़ा मनुष्यता के लिए आवश्यक था। अपने एक लेख में प्रभाष जोशी लिखते हैं- "क्या कभी किसी ने पूछने या बताने की जरूरत समझी कि संगीत मार्तंड पंडित ओमकार नाथ, उस्ताद बड़े गुलाम अली, अमीर खाँ, भीमसैन जोशी और कुमार गंधर्व की औपचारिक शिक्षा कहाँ तक हुई है? और वे कितनी अँग्रेजी जानते हैं। केलुचरण महापात्र और बिरजु महाराज जैसे महागुरुओं को शिष्य बनाने के लिए स्कूल-कॉलेज के प्रमाण पत्र की आवश्यकता नहीं पड़ी। न्यायमूर्ति भगवती और भारतीय ज्ञानपीठ इस सत्य को निश्चित ही जानते हैं। फिर एक को अपनी पुस्तिका और दूसरे को अपने भाषण में पन्ना लाल पटेल की आठवीं और अँग्रेजी के ज्ञान की बात क्यों कहनी पड़ी? शायद इसलिए कि हमारे देश में आमतौर पर माना जाता है कि भाषा पर ज्ञान और अधिकार औपचारिक शिक्षा से बेहतर प्राप्त किया जा सकता है।"[2]

उपरोक्त लेखांश पुन: इस स्थापना की पुष्टि करता है कि प्रभाष जोशी को क्यों सांस्कृतिक पत्रकारिता के अग्रदूत क्यों कहा जाता है क्योंकि वे अग्रदूत की भांति सबसे पहले संभावित तिरोहन की चेतावनी दे देते हैं।

संस्कृति के विकास को लेकर प्रभाष जोशी की सोच अपने समकालीन पत्रकारों, आलोचकों, कलाकारों से कितनी भिन्न थी यह समझने के लिए यह इस लेखांश से स्पष्ट होता है- "मैं कला की किसी भी विधा में सरकारी संरक्षण को बेकार मानता हूँ क्योंकि उसे कभी कभी कलाओं का सही विकास नहीं हो सकता है। वही नाटक है जो देखने वाले के पैसे पर चले, वही गायन है जिसे सुनने वाले गायक को पैसा और सम्मान दे, वही चित्रकारी है जिसे घर या बाहर लगाने के लिए लोग पैसा दे और चित्रकार सम्मान की ज़िंदगी जी सके। वही लेखन है जिसे पढ़ने वाले लेखक का सम्मान करें और उसकी किताबें खरीदकर उसे इतना पैसा भी दे कि उसका कुटुंब भी समाए और साधु भी भूखा न जाए। "[3]

कोई भी स्वाभिमानी संस्कृति प्रेमी या कला प्रेमी उनके इस कथन से असहमत नहीं हो सकता है। एक कलाकार के अन्तर्मन को प्रभाष जोशी ने एक सांस्कृतिक पत्रकार के रूप में बखूबी समझा है।

हिन्दी पत्रकारिता में साहित्यिक पत्रकारिता को विधिवत स्थान देने का श्रेय प्रभाष जोशी और राजेन्द्र माथुर को जाता है। प्रभाष जोशी ने अपने समाचार पत्र 'जनसत्ता' में साहित्यिक विधाओं पर केन्द्रित एक स्वतंत्र पेज का प्रकाशन आरंभ किया। इस साहित्यिक पेज के सम्पादन का दायित्व प्रभाष जोशी ने वरिष्ठ कवि मंगलेश डबराल को दिया। 'जनसत्ता' का यह साहित्यिक पेज हिन्दी पत्रकारिता जगत में अत्यंत लोकप्रिय हुआ। इस पेज के माध्यम से हिन्दी के नवोदित साहित्यकारों को भरपूर स्पेस मिला। बतौर संपादक प्रभाष जोशी ने सभी ब्यूरो कार्यालयों में नगर की साहित्यिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के समाचारों के कवरेज के लिए अलग से एक 'बीट' का निर्धारण किया। एक 'बीट' के रूप में साहित्यिक और सांस्कृतिक गतिविधियों को जनसत्ता में आरंभ करने वाले प्रभाष जोशी देश के पहले संपादक थे।

साहित्यसृजन और पत्रकारिता में जो एक महीन सा फर्क है उसे प्रभाष जोशी अच्छी प्रकार से जानते थे और साहित्यकारों से तो उनका इतना अनुराग था कि बतौर पत्रकार ऐसी उच्च कोटि की श्रद्धान्जली लिखा करते थे कि उच्च कोटि के साहित्यकार भी अचंभित रह जाए। यही विधा उनके पास साहित्य समीक्षा के लिए नवोदित साहित्यकारों के उत्साहवर्धन के लिए एवं साहित्यकारों के अधिकारों के लिए लड़ते समय और निखर आती थी। हिन्दी के महानतम साहित्यकारों में से एक पंडित भवानी प्रसाद मिश्र के देहवसान पर प्रभाष जोशी के द्वारा लिखे श्रद्धांजलि लेख में वे लिखते हैं- "कोई बीस साल पहले मृत्यु ने उनके दरवाजे पर दस्तक दी थी। वह

दरवाजा खोलकर बाहर आए तो वह शरमा कर चली गयी तब से दिल के दौरे के रास्ते वह कोई छह-सात बार आई।

कोई और होता तो डरकर घर में बैठ जाता भवानी बाबू उसकी तलाश में निकाल गए। पहली दस्तक के बाद कवि सम्मलेन, सार्वजनिक कार्यक्रमों और अपने लंबे चौड़े कुटुंब के लिए यात्रा के बहाने वे अक्सर मृत्यु को ढूंढते रहे। अक्सर रेल के दूसरे दर्जे का डिब्बा उनका वाहन होता। उनके ब्रीफकेस के ताले खुले होते और कंधे पर खादी का झोला होता इसमें रद्दी कागजों या डायरी में लिखी ताजा कविताएं नहीं रुपए पैसे भी होते। "[4]

लगभग डेढ़ सौ शब्दों के श्रद्धांजली लेख में एक कालजयी साहित्यकार के दैनिक जीवन को संवदेनात्मक शब्दों के माध्यमों से एक फिल्म की तरह एक पाठक के समक्ष प्रस्तुत करने का कौशल प्रभाष जोशी के पास था। बतौर साहित्य पत्रकार यह कम बड़ी उपलब्धि नहीं है।

प्रभाष जोशी अपनी समीक्षात्मक दृष्टि भी निष्पक्ष और बेबाक रखते थे चाहे साहित्यकारों के मूल्याँकन उनके योगदान उनके कृतित्व या उनके व्यक्तित्व की ही बात क्यों न हो। हिन्दी के महान साहित्यकार 'अज्ञेय' के विषय में वे लिखते हैं- "अज्ञेय अपने जमाने के साहित्य के एक महाद्वीप थे और जब हम साहित्य की बात करते हैं तो सिर्फ हिन्दी नहीं, सिर्फ भारतीय नहीं, विश्व साहित्य का संदर्भ लेना चाहिए। सिर्फ हिन्दी में लिखते रहे इसलिए अज्ञेय नोबल पुरस्कार के खुशवंत सिंह मजाक के कारण नहीं थे। परायी बोली में लिखने वाले नीरद चौधरी हो या खुशवंत सिंह या आर के नारायण ये अज्ञेय वाली मौलिक ऊंचाई पर कभी पहुँच नहीं पाए। अज्ञेय के साथ साहित्य के संस्कार का एक युग पूरा हुआ। अज्ञेय नहीं होते तो जिस आधुनिकता के साथ हम लिखते हैं वह हमारी ऐसी सहज धरोहर नहीं होती। सातों आसमान को भेदकर गए उस सुनहैरे गरुड को अंतिम प्रणाम। "[5]

बहुधा देखा जाता है कि साहित्यिक पत्रकारिता में विशेषकर मरणोंपरांत श्रद्धांजली में किसी भी प्रकार के विवाद से बचकर लिखने का चलन है और संबन्धित व्यक्ति से इतर किसी अन्य व्यक्ति से तुलना का प्रश्न ही नहीं उठता। प्रभाष जोशी ऐसी किसी भी परिसीमा में नहीं बंधे थे यही कारण है साहित्यिक पत्रकारिता में भी वे अग्रगण्य स्थान रखते हैं।

वे आगे लिखते हैं "अज्ञेय ने जैसा साहित्य लिखा वैसा वही लिख सकते थे और उनका लिखा स्त्री पुरुष सम्बन्धों की औपचारिकता, दुनियादारी, बल्कि शरीर से भी परे ले जाकर समझाता है। मैं मानता हूँ कि सम्बन्धों के बारें में कबीलाई और सामंती ढंग से पेश आने वाले भारतीय समाज को अज्ञेय ने स्त्री पुरुष सम्बन्धों की नई पहचान दी। उन्होने बताया कि गहर वही नहीं है जहाँ स्त्री-पुरुष नर-मादा की तरह, पति-पत्नी की तरह और माता-पिता की तरह रहते हैं। एक और भी घर है जो सबसे न्यारा है उन सखियों का जो पूर्ण पुरुष की तलाश में है वह उन पुरुषों का भी है जो पूर्ण स्त्री की तलाश में है। "[6]

प्रभाष जोशी की बतौर साहित्यिक पत्रकार समझ इतनी निष्पक्ष, सूक्ष्म और विलक्षण थी यह उपरोक्त लेखांश से भी स्पष्ट होता है। यह वही प्रभाष जोशी हैं जब स्वयं महिलाओं पर लिखते हैं तो कभी परंपरावादी होने का तो कभी आधुनिक होने का ठप्पा लगवा बैठते हैं परन्तु जब बतौर साहित्यिक पत्रकार अपने समय के भाषा और भाव स्तर पर जटिल सृजना वाले साहित्यकार अज्ञेय के साहित्य की समीक्षा करते हैं तो उसे मृदुल भाव को भी वे रेखांकित करते हैं जो अज्ञेय के लेखन को समझने में एक पाठक के लिए मददगार सिद्ध होता है।

साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रकारिता का समाज में क्या महत्व होता है इसे प्रसिद्ध टेलीविजन पत्रकार रवीश कुमार ने बड़े आसान शब्दों मे समझाया है और प्रभाष जोशी इस मापदण्ड पर सौ फीसदी खरे उतरते हैं।

रवीश कुमार लिखते हैं- "जब सारे बड़े और प्रभावशाली पत्रकार राजनीतिक पत्रकारिता में ही समय गंवा देंगे और उसमें से भी पेशे को कुछ नहीं देंगे तो कौन सरोकार की बात करेगा। लुटियन दिल्ली की

राजनीतिक पत्रकारिता से सरोकार की पत्रकारिता निकलती है क्या? सरोकार की पत्रकारिता निकलती है जनता के बीच से जहाँ राजनीतिक पत्रकार कभी नहीं जाता।"[7]

रवीश कुमार ने बड़े ही मार्के की बात कही है। जिसका भाव यह है कि पत्रकार का सरोकार समाज से भी होना केवल राजनीति से नहीं और यह एक मानक तथ्य है कि साहित्य और संस्कृति विहीन समाज ना तो विकसित माना जाता है ना सभ्य। प्रभाष जोशी इस बात को अपने वक्त से बहुत पहले समझ गए थे इसलिए उन्होने साहित्यिक और सांस्कृतिक पत्रकारिता में भी अपने पकड़ ढीली नहीं होने दी।

पत्रकारिता के नए मानकों के प्रणेता

प्रभाष जोशी हिन्दी पत्रकारिता जगत में नवाचार के लिए जाने जाते हैं। प्रभाष जोशी ने भाषा और अंतर्वस्तु के स्तर पर अनेक प्रयोग किए और जनसत्ता समाचार पत्र को नया कलेवर और तेवर प्रदान किया। आज भी हिन्दी पत्रकारिता के विद्यार्थियों को प्रभाष जोशी की परंपरा को एक सैद्धांतिकी के तौर पढ़ाया जाता है। प्रभाष जोशी ने हिन्दी पत्रकारिता में समाचार लेखन का एक अभिनव व्याकरण गढ़ा वे भाषा को शुष्क और बोझिल बनाने के पक्षधर नहीं थे बल्कि वे भाषा को सरल और जल की तरल देखना चाहते थे। भाषा की दृष्टि से वर्तनी, वाक्य संरचना, पद रूप, क्रिया रूप और तत्सम शब्दों को प्रयोग करने के लिए उन्होने एक नूतन और स्वतंत्र नीति का निर्माण किया। भाषा को लेकर प्रभाष जोशी के द्वारा किए प्रयोग आज भी हिन्दी पत्रकारिता के लिए एक मानक की तरह प्रयुक्त हो रहे है।

प्रभाष जोशी के विषय में कहा जाता है कि उन्होने संपादक नामक संस्था को एक दृढ़ता प्रदान की और उसे रीढ़विहीन से रीढ़युक्त बनाया। प्रभाष जोशी ने समाचार चयन,संकलन और समाचार के फॉलो अप के लिए नियम तय किए साथ अपने संवाददाताओं को काम करने की पूरी स्वतन्त्रता भी प्रदान की जिसका परिणाम था कि उनके समय में जनसत्ता में उन समाचारों को स्थान मिला जिन्हें कोई समाचार पत्र प्रकाशित करने की सोच भी नहीं सकता था।

किसी भी पेशे में नवाचार को लाना यहा नए नियमों को बनाना,पुराने नियमों को अप्रसांगिक घोषित करना, नई परम्पराएँ गढ़ना, नए मानक तय करना अथवा ऐसा करने की सोचना भी अराजक माना जाता है। बहुत प्रसिद्ध उक्ति है कि 'जीत से पहले हर क्रांतिकारी एक आतंकवादी होता और हर जीनियस एक पागल'। दरअसल प्रभाष जोशी की कोई ऐसी तस्वीर नहीं मिलती जिसमें उन्होने चश्मा न लगा रखा हो। ज्ञात नहीं पड़ता कि उनके दूरदृष्टि कमजोर थी या निकट दृष्टि लेकिन उनकी अंतर्दृष्टि विलक्षण थी इसमें तो उनके धुर आलोचक भी संदेह नहीं करते। प्रभाष जोशी के कृतित्व और उनकी कार्यशैली का विश्लेषण करने पर सहज ही यह बोध हो जाता है कि वे अपने समय से बहुत आगे के एक दूरदर्शी व्यक्ति थे कुछ-कुछ वैसे ही जैसे सिने जगत में सत्यजीत रे के लिए कहा जाता है।

वर्तमान परिदृश्य में जो पत्रकारिता होती है उसकी सफलता का आकलन टीआरपी रेटिंग और प्रसार संख्या से तय होता है। लगभग चार दशक पहले प्रभाष जोशी ने अपनी मेधा,कलम और प्रबंधन कौशल से ऐसे कई प्रसार संख्या के कीर्तिमानों को ध्वस्त कर दिया था। उनके सम्पादन में प्रकाशित जनसत्ता की लोकप्रियता का स्तर यह था कि उन्हें जनता से यह अपील करनी पड़ी कि हम और प्रतियाँ नहीं छाप सकते कृपया अखबार मिल बांटकर पढ़ें। और वर्तमान समय में संपादक के प्रसार संख्या बढ़ाने के लिए अनेक किस्म के उपक्रम करते हैं।

दरअसल हिन्दी पत्रकारिता को या कहें पत्रकारिता को ही आजादी के बाद बहुत आसानी से दो कालखंडो में विभक्त किया जा सकता है। एक थी प्रबुद्ध पत्रकारिता जिसने निश्चित ही हिन्दी पत्रकारिता को समृद्ध किया और एक थी प्रभाष जोशी के बाद की पत्रकारिता जहाँ जन सामान्य बुद्धिजीवी सब एक साथ एक ही चीज को पसंद करते थे। बहुत से प्रतिस्पर्धी संपादक प्रभाष जोशी जैसा करने का प्रयास करते पर कभी सफल नहीं हो पाए। समाचार पत्रों ने समाचारों की जगह तस्वीरों को तरजीह देना शुरु किया। मनोरंजन की खबरों को प्रमुखता से प्रकाशित

करना शुरू किया। एक परंपरा चल पड़ी कि समाचार पत्र के पेज मेकिंग पहले विज्ञापन को स्थान दिया जाएगा और फिर बचे हुए स्थान में समाचारों को स्थान दिया जाए तो समाचार पत्र व्यवसायिक रूप से सफल और लोकप्रिय हो सकता है।

प्रभाष जोशी ने जो पत्रकारिता के नए मानक स्थापित किए उनकी सम्यक विवेचना करने पर कुछ प्रमुख बिन्दु प्रकाशित होते हैं।

वरिष्ठ पत्रकार मुकेश कुमार लिखते हैं- "प्रभाष जी कई तरह से पत्रकारिता और समाज में पैदा हुए शून्य को भर रहे थे। पत्रकारिता में राजेन्द्र माथुर युग का अंत हो चुका था और कोई विचारवान मुखर संपादक हिन्दी में कहीं दिखलाई ही नहीं पड़ रहा था। यह संपादक नामक संस्था की समाप्ति का भी दौर था। ज्यादातर अखबारों में प्रबन्धक संपादक आ चुके थे और तमाम तरह के समझौते करते हुए नई संपादक परंपरा की स्थापना करने में लग गए थे। ऐसे में शक्तिशाली संपादक परंपरा के प्रभाष जी ने कमान संभाली और शून्य को भरने लगे। तेजस्विता और सक्रियता ने इस शून्य अंधकार में प्रभाष जी को नक्षत्र जैसी चमक प्रदान की। समाज में मची उथल-पुथल भी एंग्री ओल्डमैन एडिटर की मांग कर रही थी। एक ऐसा संपादक जिसमें मिशनरी उत्साह और हर तरह की सत्ता को चुनौति देने, उसके टकरा जाने का दुस्साहस हो।"[8]

मुकेश कुमार के उक्त विचार प्रभाष जोशी के नए मानको के प्रति एक सोच का सूत्र देते हैं। दरअसल मुकेश कुमार प्रभाष परंपरा को एक नया ही नाम देते हैं-'एक्टिविस्ट जर्नलिस्ट'

हिन्दी पत्रकारिता में उनके प्रमुख नए मानक कुछ तो इतने स्पष्ट हैं कि जो एक आम पाठक भी समझ सकता है और कुछ नए मानक इतने गूढ़ हैं जिन पर प्रबुद्धजन पर्याप्त शोध कर सकते हैं। अगर उन मानकों की बात की जाए जो प्रभाष जोशी ने पत्रकारिता में अपने नवाचार के माध्यम से लाए थे तो सर्वप्रथम आता है हिन्दी अखबारों की भाषा शैली को संस्कृतनिष्ठ होने से अथवा अति शुद्ध हिन्दी होने से बचाकर शुद्ध हिन्दी लेखन के दंभ में रहकर आम बोलचाल की भाषा में लिखना एक प्रमुख मानक था। उदाहरण के लिए यदि कहीं सिगरेट पीने की बात हो वो वे उसे धूम्रपान नहीं सिगरेट पीना ही लिखेंगे।

यहाँ पर स्वयं प्रभाष जोशी द्वारा लिखित आलेख 'मीर होने की उठापठक' का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। इस लेखांश में पत्रकारीय भाषा को लेकर नवाचार के प्रति उनके प्रतिबद्धता और आग्रह को स्पष्ट करता है। वह लिखते हैं –"कौन माई का लाल अँग्रेजी में सोचता है: अब अटल जी भले ही पत्रकार और कवि भी रहे हो यह लेख उन्होने आत्माभिव्यक्ति के लिए स्वांत सुखाय नहीं लिखा था। एक लेखक की तरह अपने विचारों को छपवाने के लिए भी नहीं लिखा था। प्रधानमंत्री के नाते लिखा था ताकि सनद रहे और ज्यादा से ज्यादा से लोग उसे पढ़ लें। प्रचार और उससे अपनी छवि की मरम्मत के लिए लिखे इस लेख को वे ज्यों का त्यों भी छपवाना चाहते थे और खबर के नाते भी ताकि ना तो उसे खबर बनाने के लिए तोड़ा मरोड़ा जा सके न जगह की कमी के कारण उसका छपना रुक सके। कहते हैं लेख पूरा ही हिन्दी में और खुद लिखा लेकिन दूसरे लोग कहते हैं कि लेख उनके भाषण लिखने वाले सुधीन्द्र कुलकर्णी ने लिखा जो मराठी में सोचते और अँग्रेजी में लिखते हैं। यह बात उनके लेखन की अस्पष्टता के कारण व्यंग्य में कही गयी है। हालांकि कहने वाले खुद नहीं जानते कि भारत में कितने माई के लाल या लाली हैं जो अँग्रेजी में ही अनुभव करते हो, अँग्रेजी में ही सोचते हो और अँग्रेजी में ही लिखते हो।"[9]

ऐसा नहीं है कि प्रभाष जोशी का किसी भाषा विशेष के लिए कोई विशेष अनुराग था परन्तु उपरोक्त लेखांश से स्पष्ट होता है कि वो जनमानस की नब्ज पहचानते थे इसलिए उन्होने हिन्दी पत्रकारिता में और भी कई मानक गढ़े। जैसे भारतीय जनमानस में सिनेमा, राजनीति और खेल और खेल में विशेषत: क्रिकेट बहुसंख्यक लोगो की रुचि का विषय है।

प्रभाष जोशी ने क्रिकेट जैसे अँग्रेजीजदाँ खेल की रिपोर्टिंग के लिए सरस शब्दावली का निर्माण किया जिससे क्रिकेट से जुड़ी खबरें आमजन मानस तक बड़ी प्रभावशीलता से पहुंची। हिन्दी पत्रकारिता

में खेल पत्रकारिता प्राय: एक उपेक्षित विधा की तरह रही है और प्राय: खेल समाचार न्यूज़ एजेंसी से प्राप्त अँग्रेजी कॉपी का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित होते थे परंतु प्रभाष जोशी ने क्रिकेट और अन्य खेलों की एक नई शब्दावली गढ़ी जिसके उपरांत खेल संबधित समाचारों की रिपोर्टिंग आसान हो गयी थी।

हिन्दी पत्रकारिता जगत में एक नवीन और आवश्यक मानक जिसस्का पूर्ण श्रेय प्रभाष जोशी को जाता है वह था संवाददाताओं को पूर्ण स्वतन्त्रता देना लेकिन पूर्ण अनुशासन के साथ। अपने संवाददाताओं को उनका विशेष निर्देश था कि समाचार में अगर तथ्य और प्रासंगिकता (इसी क्रम में) होगी तो जनसत्ता में समाचार प्रकाशित होने से कोई नहीं रोक सकता लेकिन यदि तथ्यों की और प्रासंगिकता की अवहेलना कर निजी आकलन को खबर के रूप में प्रकाशित करने का अनुरोध होगा तो आपका भाषा कौशल आपके किसी काम नहीं आएगा।

एक अन्य नवीन मानक जो प्रभाष जोशी ने प्रस्तुत किया वह यह था कि उन्होने स्वयं हिन्दी भाषा में पत्रकारिता की एक नया किस्म का शब्दानुशासन तैयार किया। टेलीविजन पत्रकार रवीश कुमार लिखते हैं- "वो एक संतुलन का प्रतिनिधित्व करते थे। उनका रेंज देखिए। राजनीति, धर्म, समाज, जनपक्षधर आंदोलन,खेल किस विषय पर एकाधिकार से नहीं लिखा है। वो जाकर लिखते थे पता करके नहीं लिखते थे।"[10]

उपरोक्त लेखांश की अंतिम पंक्ति कि वे जाकर लिखते थे पता करके नहीं लिखते थे ये हिन्दी पत्रकारिता में एक नया मानक था जिससे संवाददाता और संपादक में भरोसा बढ़ता था।

प्रभाष जोशी हिन्दी पत्रकारिता के नए मानकों के प्रणेता थे इसमें कोई संदेह नहीं है उन्होने न केवल नए मानक गढ़े बल्कि उन नवाचारों के माध्यम जनसत्ता को एक नया कलेवर,तेवर और फ्लेवर प्रदान किया जिसका अनुशीलन आज भी हिन्दी पत्रकारिता में प्रिंट मीडिया में आज भी किया जाता है।

आज नवभारत टाइम्स समूह ने हिंग्लिश को समाचार की भाषा बनाया तो उसकी काफी आलोचना हुए क्योंकि वहाँ यह भाषा की मूल आत्मा के साथ छेड़छाड़ जैसा प्रतीत होता है मगर प्रभाष जोशी जब अपने समाचार पत्र में भाषा में लचीलापन लाते हुए अँग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करते हैं तो वहाँ यह भाषा का सौंदर्य बन जाता है। यह उनका विशेष कौशल था कि वे भाषा को बरतने का सही तरीका जानते थे और उन्होने अपने इस मौलिक तरीके से समाचार और विचार दोनों की भाषा को रूपांतरित कर दी थी।

संदर्भ सूची

1. मसि कागद, प्रभाष जोशी, पृष्ठ-162
2. वही, पृष्ठ-170-171
3. वही, पृष्ठ-167
4. वही, प्रभाष जोशी, पृष्ठ-201
5. वही, पृष्ठ-217
6. वही, पृष्ठ-221
7. पाखी,अगस्त,2012, पृष्ठ-49
8. पांखी, अगस्त,2012, पृष्ठ-33
9. पांखी, अगस्त,2012, पृष्ठ-33
10. वही, पृष्ठ–51

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मसि कागद,प्रभाष जोशी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010
2. प्रभाष पर्व (सं० सुरेश शर्मा), रामकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011
3. लोक का प्रभाष, रमाशंकर कुशवाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
4. हिंदी पत्रकारिता के नए प्रतिमान, बच्चन सिंह,विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1989
5. हिंदी पाठानुसन्धान, कन्हैया सिंह ,लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001
6. समाचार पत्रों की भाषा, डॉ. माणिक मृगेश, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
7. पत्रकारिता: नया दौर नए प्रतिमान, संतोष भारतीय, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2005
8. भारत मे हिंदी पत्रकारिता ,डॉ. दीनानाथ साहनी, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी,2015

9. हिन्दी पत्रकारिता के नायक, प्रो. राज मिश्रा, पूनम कुमारी, ऑरेंज बुक पब्लिकेशन, भिलाई (छत्तीगढ़),2022
10. प्रयोजनमूलक हिंदी, डॉ. श्रीमती आशा मोहन,डॉ. जगदीश शर्मा,शत्रुघ्न त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन आगरा,2005
11. डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र, हिंदी पत्रकारिता, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन वाराणसी,1968
12. डॉ. वेद प्रताप वैदिक,हिंदी पत्रकारिता विविध आयाम,, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली,1968
13. डॉ. अर्जुन तिवारी,डॉ. रंजन तिवारी हिंदी पत्रकारिता का वृहद इतिहास, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली,2007
14. पाखी, नोएडा

ऑन लाइन स्त्रोत

1. https://www.bbc.com/hindi/india-63515812
2. www.bhadas4media.com
3. www.hindisamay.com

•